OPEN ACCESS INTERNATIONAL JOURNAL OF SCIENCE & ENGINEERING

(Multidisciplinary Journal)

प्रेम - संकल्पना : स्वरुप और सिद्धांत

प्रा. उत्तम ओंकार येवले
अध्यक्ष, हिंदी विभाग,
पद्मश्री विखे पाटील महाविद्यालय प्रवरानगर
दूरभाष - 9822423972
***Email* -yewaleuttam71@gmail.com**

----------∴∴∴----------

प्रस्तावना

प्रेम मानव जीवन का सर्वोच्च वरदान है। प्रेम के कारण ही मानव-मानव है। सृष्टि के प्रति प्रेमभाव के कारण मानव महानता प्राप्त करता है। प्रेम का मूलाधार आत्मा है। इसका प्रकाशन चित्त व इंद्रियों के माध्यम से होता है। इंद्रियों की संपुर्ण क्रियाएं चित्तवृत्तियों से ही नियंत्रित होती है। वह आत्मा का गुण होने के कारण सत्य, शिव और सुंदर है। प्रकृति ईश्वर का विराट रुप है जो प्रेम के सूत्र में निबध्द है। विश्व का हर प्राणी बिना प्रेम के जीवन संचालन में असमर्थ हैं। जब सारे प्राणी इस प्रेम तत्त्व वस्तु के अधिन है तब तो स्वाभाविक है कि मानव जीवन में इस प्रेम का सर्वाधिक प्रभाव है। प्रेम के प्रभाव से मानव की आंतरिक शक्तियों का जागरण होता है। इससे मानव अपना पुर्ण उन्नति कर पाता है। प्रेम का सानिध्य, प्राप्य मानव को प्रगति की ओर ले जाता है। और अप्राप्य प्रेम अधोगति या पतन की ओर अग्रेसर करता है। मानव जीवन से प्रेमाध्याय पृष्ठ को निकाल दिया जाए तो मनुष्य की जीवनलालसा ही समाप्त हो जाएगी। विश्व का प्रत्येक जीव प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रुप से प्रेम के उपासक है। यह प्रेम स्त्री-पुरुष का हो या वात्सल्य के परिधान में लिपटा हो। मातृभक्ति का हो या ईश्वर का हो। या फिर किसी भी प्रकार की चाहत का इंद्रधनुष हो। प्रेम में मानव को संघर्ष करना पड़ता है। संघर्ष से बाहर निकलने का मार्ग भी इसी पथ पर चलकर प्रशस्त करता है।

प्रेम में प्राप्य की इच्छा कभी नहीं होती। अगर प्रेम विस्तृत हो तो उसमें हर समय देय भाव जूड़े रहते हैं। प्रेम के प्राप्ति में संकुचितता की दुर्गंध छीपी रहती है और देय में पवित्रता की पुण्य सुगंध रहती है। प्रेम के बारे में गहराई सें विचार किया जाए तो यह स्पष्ट हो जाता है कि, संसार का निर्माण ही प्रकृति के प्रेम के कारण हुआ है। भले ही साहित्य में वह बाद में आया हो। प्रेम मनुष्य हृदय की अमूल्य निधि है। मनुष्य हृदय मे निर्माण होनेवाली इस प्रेम भावना को जानने के लिए हमें प्रेम शब्द की व्युत्पत्ति और अर्थ एवं परिभाषा जानना आवश्यक हो जाता है।

प्रेम शब्द की व्युत्पत्ति अर्थ एवं परिभाषा -

द्विमासिक पत्रिका 'शोध दिशा' में प्रेम शब्द की व्युत्पत्ति इस प्रकार दी गई हैं —"प्रेम शब्द 'पीञ'धातु से उनादि सूत्र सर्व धातुभ्य: से मनिन प्रत्यय लगाकर प्रेम शब्द बनता है" 1 यहाँ प्रेम शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत के प्रीञ धातु में मन प्रत्यय लगाकर प्रेम शब्द की व्युत्पत्ति की गई है। डॉ. राजकुमार खंड़ेलवाल ने हिंदी काव्य में प्रेम भावना में प्रेम शब्द का व्युत्पत्तिगत अर्थ इस प्रकार लिखा है —"जो प्रीति दे, जो तृप्ति दे, वही प्रेम हैं। तृप्ति देने की क्रिया प्रिय से संबंध होकर ही संपन्न हो सकती है।"[2] अत: यह निर्विवाद स्पष्ट है कि जिससे हमें आनंद मिलता वही प्रेम हैं। जिन्हें देखकर या पाकर जहाँ हमारी भावनाएँ अत्यंत कोमल हो उठती है वही प्रेम हैं। पिय का भाव ही प्रेम हैं।

प्रोफेसर देशराजसिंह भाटी प्रेम की परिभाषा के संदर्भ में कहते हैं-

"प्रेम वासना का नाम नहीं है और न यह स्वयं को आबद्ध करने का बंधन है , वरन प्रेम ह्रदय की वह परिष्कृत उदात्त और अनिर्वचनीय भावना है जो मन को शुद्ध करती है , भावों का परिष्कार करती है और व्यक्ति को अहं के बंधन से छुड़ा कर उसे सार्वजनीन बना देती है।"[3] प्रोफेसर

देशराजभाटीसिंहजी ने प्रेम की जरूर परिपूर्ण परिभाषा करने की कोशिश की है। कुछ हदतक वे सफल भी हुए हैं। रसखान प्रेम के संदर्भ में कहते हैं-

''बिन गुन जीवन रूप धन,बिनस्वारथ हित जानि
शुद्ध कामना तें रहित, प्रेम सकल रसखानि।''[4]

अर्थात बिना गुण रुप जीवन धन विना स्वार्थ जब दूसरें की हीत की शुद्ध कामना की जाती है उसे प्रेम कहते हैं।

अर्थात- प्रेम बिना गुण के, यौवन के, रूप के, धन के, स्वार्थ लाभ से रहित, शुद्ध और निष्काम होता है वही सच्चा प्रेम है और ऐसा ही प्रेम सुख का धाम होता है।

रसखान ने प्रेम वाटिका में प्रेम की परिभाषा की हैं। उन्होंने सात्विक प्रेम की गति का वर्णन किया है। जो केवल मानव ही नहीं संपूर्ण प्रकृति के लिए आनंददाई एवं लाभदाई है।

प्रेम: स्वरूपगत विवेचन -

प्रेम एक जटिल मनोवंग है। इसमें दया ,सहानुभूति, ममता, वात्सल्य, काम, आकर्षण आदि का मिश्रण होता है। प्रेम के स्वरूप को समझ ने के लिए उसकी भावना के मूल स्त्रोत की खोज आवश्य है। निर्मल प्रेम की अनुभूति एक ऐसी विराट व्यापक एवं शक्तिशाली अनुभूति है कि उससे अंतकरण में स्थित आत्मा का तत्काल अनुभव होता है। जीवन एवं प्रकृति का रहस्य तुरंत समझ में आ जाता है। प्रेम प्रकृति की मनुष्य को दी हुई सब से श्रेष्ठ देन है। उसके माध्यम से मनुष्य एक सूत्र में बँधते चले जाता है। मानव जीवन के कल्याण के लिए प्रेम भावना का सदा ही महत्त्वमुर्ण योगदान रहा है। प्रेम न बढ ता है न घटता है। प्रेम मानव मन की एक अनुभूति है। इसे न तो हम शब्द के माध्यम से प्रकट कर सकते है और न ही वह इतना छोटा है कि उसे शब्द में बाँधकर रखा जा सकता है। वह अनादि अनंत है। देवर्षि नारद ने इसे अपने भक्ति सूत्र में बड़े सुंदर ढंग से प्रस्तुत किया है। प्रे म भावना की सत्ता को स्वीकारते हुए वे लिखते हैं-

''प्रेम का स्वरूप गूँगे के आस्वादन के समान अनिर्वचनीय है।''[5]उसका हम अनुभव कर सकते हैं लेकिन बता नहीं सकते। प्रेम का अनुभव करना जितना आसान है उतना ही उसका विवेचन करना मुश्लिक है। उसका ना रंग है ना रूप है। वह तो मनुष्य की एक मनोवृत्ति है। नारद जी प्रेम के स्वरूप के संदर्भ कहते हैं कि ''अनिर्वचनीय प्रेम स्वरूपम मुकास्वादनवत।''[6]अर्थात प्रेम का स्वरूप अनिर्वचनीय है। वह मुकास्वादनवत अर्थात गूँगे के गूढ के समान है। प्रेम की न कोई सीमा है न नाप। उसकी कोई लंबाई- चौड़ाई भी नहीं होती। इतने पर भी नापने की कोशिश की गई तो वह आसमान से ऊंचा और सागर से भी गहरा है। प्रेम वह भावना है जिसमें प्रेमी- और प्रेमिका एक हो जाते हैं। प्रेम में द्वेत की भावना नहीं होती। प्रेम के स्वरूप को समझाते हुए स्वामी अखड़ानंदजी कहते हैं- ''मन की एक- सी दशा का नाम प्रेम नहीं है , प्रेम में प्रशंसा भी की जाती है और निंदा भी। रूठना , मान करना भी प्रेम है , किसी एक ढंग में, यांत्रिक सेवा में प्रेम नहीं है। ''[7] प्रेम स्वयं प्रकाशित होता है। वह मनुष्य जीवन को प्रेमास्पद की ओर ले जाता है। मनुष्य के जीवन में लो भ, मत्सर, माया आदि दुर्गुणों का नाश करता है। यह मनुष्य को नई राह दिखाता है। जयशंकर प्रसाद प्रेम के स्वरूप के बारे में 'कामायनी' में लिखतें हैं-

''यह लीला जिसकी विकस चली
वह मूल शक्ति थी प्रेमकला।''[8]

प्रकृति की यह लीला पुरातन काल से विकसित होकर आगे बढती चली जा रहीं है। मन के कतिपय मैलिक भाव तथा विचारों में प्रेम रस का संचार होता है। इससे जीवन में आकर्षण आशा और जीने की इच्छा होती है। ऐसी मौलिक प्रेरणाओं में प्रेम भावना का स्थान महत्त्वपुर्ण होता है। श्रीमती शारदा गौड़'नई कविता में प्रेम चित्रण ' में प्रेम के स्व रूप के संबंध में लिखती हैं- ''प्रेम के नाम पर हमारे मस्तिष्क में एक विचार श्रृंखला आवश्य बनती है, किंतु उसकी कडियाँ बीच-बीच में टूटी हुई हैं।''[9] यहि प्रेम की कडिया बनते समय ही टूटी हुई है तो उसके स्वरूप का क्या कहना ? आगे वह लिखती हैं- ''प्रेम काम भी है, अंध: प्रवृत्ति भी है , यौन भावना से संबंधित शारिरीक प्रक्रिया भी है, जीवन की सार वस्तु भी है तथा मानव के इश्वरीय समीप्य का आभास देनेवाला पुनीत भाव भी है। ''[10] इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रेम का स्वरूप कितना विस्तृत और व्यापक है।

प्रेम अमृत है। वह मनुष्य को अमर बना देता है। इसमें मनुष्य अंधा भी हो जाता है। प्रेम में मनुष्य अपने जीवन के उद्देश्य को भी भूल सकता है। समय आने पर वह अपनी जान की कुर्बानी तक दे देता है। इस में मृत्यु भी आई तो वह हँसते-हँसते स्वीकार लेता हैं। प्रेमियों के जीवन में प्यार की कीमत अनमोल होती है। प्रेम की जड़े मजबूत और समुंदर से भी गहरी होती है। दया, सहानुभूति, कामवासना और गुणों से प्रेम निर्माण होता है। प्रेम भावना का विकास प्रकृति में होता है। प्रकृति का यह धर्म मन और इंद्रिय के माध्यम से प्रकाशित होता है। मन और इंद्रिय के माध्यम से अ भिव्यक्त होनेवाली प्रेम भावना का व्युत्पत्ति स्थान ऱ्हदय है। आत्मा की इच्छा के बगैर इंद्रिय व्यापार नहीं हो सकता। प्रेम का उच्च स्तर *Love is god and god is love* है। प्रेम ईश्वर की तरह पवित्र है। यह धरती का ईश्वर है। जिस प्रकार परमेश्वर के अनेक नाम है - परमेश्वर, ईश्वर, देवता, खुदा, परमात्मा, भगवान God, मालिक उसी तरह प्रेम के भी अनेक नाम हैं- प्रेम, प्रीती, प्यार, मुहब्बत, ईष्क, अनुराग, प्रणय,

रति, स्नेह, अनुरक्ति रूचि। संत कबीर ने प्रेम के स्वरूप और महत्त्व जानते हुए लाख टके की बात कहीं हैं-

''पोथी पढि-पढि जग मुवा पंडित भया न कोई
ढाई आषिर पीव का पढे सु पंडित होई।''[11]

उपर्युक्त विवेचन के पश्चात हम स्पष्ट रूप से कह सकते है कि प्रेम का स्वरूप अत्यंत व्यापक एवं विस्तृत है। उसके स्वरूप को निश्चित रूप से शब्दों में बाँधा नहीं जा सकता। जिस प्रकार परमेश्वर का ना कोई रूप है ना रंग ना आकार उसी प्रकार प्रेम का भी । प्रेम के स्वरूप के संदर्भ में हम निश्चीत रूप से यह नहीं कह सकते कि वह ऐसा- ऐसा होगा। वह एक जटिल मनोवेग है। वह गूँगे के गूढ के समान है। इसमें दया , सहानुभूति, ममता, आकर्षण, गुण, कला का मिश्रण होता है।

प्रेम का सैद्धातिक विवेचन -

प्रेम भावना और स्वरूप का अध्ययन करने के पश्चात मुझे प्रेम विषयक जो सिद्धांत प्राप्त हुए हैं वे इस तरह हैं-

1 प्रेम में त्याग भावना-

त्याग प्रेम की कसौटी है। इसलिए प्रेम में त्याग का अनन्य साधारण महत्त्व है। त्याग के बिना प्रेम सफल नहीं होता। प्रेम में स्वत्व का त्याग करना पड़ता है। बिना त्याग के सच्चा प्रेम नहीं होता। जिसमें स्वत्व का त्याग नहीं किया उसका प्रेम स्वार्थी कहा जाएगा। ऐसा व्यक्ति अपने प्रेम में असफल हो जाता है। वस्तुत: प्रेम का स्वरूप ही त्यागमय है। प्रेम में त्याग का महत्त्व स्पष्ट करते हुए सूरदास भ्रमरगीतसार में लिखते हैं-

''ऊधो। प्रीति न मरण बिचारै।
प्रीति पतंग जरै पावक परि, जरत अंग नहिं टारै।''[12]

अर्थात हे उद्धव पतंग अपने प्रेम में अपनी जान तक दे देता है। वह अपनी मृत्यु की चिंता भी नहीं करता। इस प्रकार पतंग अपने प्रेम में अपनी जान की कुर्बानी दे देता है। उसका यह त्याग ही उसके जीवन की सफलता है। प्रेम में प्रा प्ति की कभी इच्छा नहीं होती। अगर आपका प्रेम सच्चा है तो हर समय देय और त्याग के भाव जुड़े रहते है क्योंकि प्राप्त में संकुचितता की दुर्गंध आती है और देय में पवित्र ता सुगंध छीपी रहती है। प्रेम की नैया पार करने के लिए त्याग और बलिदान की आवश्यकता होती है। यह त्याग केवल इकतर्फा न होकत दूतर्फा होना चाहिए। इस दूतर्फा त्याग संदर्भ में मैथिलिशण गुप्ता साकेत के नवं सर्ग में दोनों ओर से प्रेम पलता है शीर्षक कविता कहतें हैं-

''दोनों ओर से प्रेम पलता है।
सखि पतंग भी जलता है! दीपक भी जलता है।
सीस हिलाकर दीपक कहता
बंधु वृथा ही तू क्यों दहता
पर पतंग पड़कर ही रहता। कितनी विव्हलता है।
दोनों ओर से प्रेम पलता हैं।''[13]

पतंगा और दीपक दोनों के प्रेम में समानता ओर त्याग भावना पाई गई है। प्यार में पतंगा और दीपक दोनों भी जलते है। अपना सिर हिलाकर दीपक पतंग से कहता है , हे बंधु! तू व्यर्थ में क्यों जलता है ? परंतु पतंग है कि मानता नहीं। जलना उसके जीवन की वास्तविकता हैं। इसमें पतं ग की व्याकुलता महत्त्वपुर्ण है। प्रियतम के प्रति उसका त्याग भूला नहीं जा सकता। इस प्रकार प्रेम में त्याग का महत्त्वपुर्ण स्थान हैं।

प्रेम में समर्पण की भावना -

प्रेम की दूसरी कसौटी है , समर्पण की भावना। प्रेम में एक दूसरे के प्रति पूर्ण समर्पित होना आवश्य क है। समर्पण प्रेम की सबसे बड़ी शर्त है। इसके बिना आप अपने प्रेम में सफल नहीं हो सकते। पतंग और दीपक की तरह एक दूसरे के प्रति समर्पित होना चाहीए। गोपियाँ श्रीकृष्ण के प्रति समर्पण की भावना रखती है वही दूसरी तरफ परंम विव्हलता भी है। मीराबाई का प्रेमभाव अनन्य आत्मसमर्पण की उदात्त भावना से प्रेरित है। उसने अपने आप को श्रीकृष्ण को समर्पण कर दिया है। वह अब किसीसे ड़रती नहीं। अब वह न तो लोकलाज से ड़रती है और न रिश्तेंदारों से। वह कहती हैं-

''श्याम प्रति री बाँध घुँघरयाँ मोहण म्हारो साँच्या री।
लोकलाज कुलरा मरजाँद जग माँ णेक ना राख्या री।''[14]

सुभद्राकुमारी चौहान 'ठकुरा दो या प्यार करो' कविता में समर्पण या बलिदान की भावना का वर्णन करते हुई कहती हैं-

''मैं उन्मत्त प्रेम की लोभी, ऱ्हदय दिखाने आई हूँ।
जो कुछ है बस, यही पास है, इसे चढाने आई हूँ।''[15]

उन्मत्त भक्तन भगवान के प्रेम की लोभी है। उसके पास भगवान को चढाने के लिए ऱ्ह दय के सिवा कुछ नहीं है। इसलिए वह स्वयं को अर्पित कर देती है।

इस प्रकार प्रेम में समर्पण की भावना अत्यंत महत्त्वपुर्ण है।

प्रेम में विश्वास भावना -

दो प्रेमियों के प्रेम में विश्वास मह त्त्वपुर्ण होता है। विश्वास के बलबुते पर प्रेम की नींव खड़ी होती हैं। एक - दूसरे के प्रति होनेवाला विश्वास ही प्रेमियों को निकट लाता है। जहाँ एक-दूसरे के प्रति विश्वास नहीं होता वहाँ प्रेम असफल हो जाता है। आखिर विश्वास ही प्रेम की नैया पार लगाता है। अगर प्रेमियों के जीवन में अविश्वास की थोड़ी सी भी सुगबुगाह ट लग गई तो प्रेम जल कर राख हो जाता है। उनके प्रेम में अविश्वास की भावना पैदा हो जाती है। परिणामत: उनके जीवन में निरसता आजाती है। इसलिए प्रेम में विश्वास महत्त्वपुर्ण है।

प्रेम में दूसरों की भावना का आदर -

प्रेम में एक-दूसरे की भावनाओं का आदर और सम्मान किया जाता है। प्रेमीजन एक - दूसरे की भावनाओं का कद्र करते है। प्रेम में प्रेमीजन अपनी प्रिय व्यक्ति पर जान न्यौछावर कर देते है। जिस व्यक्ति पर अपना प्रेम होता है उसकी भावनाएँ अपनी भावनाएँ बन जाती है। ऐसे समय में उसकी भावनाओं का आदर अपने आप हो जाता है। जहाँ प्रेम में एक - दूसरे की भावनाओं की कद्र नहीं होती वहाँ प्रेम असफल हो जाता है। एक दूसरें की भावनाओं का आदर ही दो प्रेमियों को निकट लाता है और भावनाओं का अनादर उन्हें एक दूसरें से जूदा भी कर सकता है। आदर भावना ही दो आत्माओं को एक कर देती है। प्रेम में एक दूसरें की भावना का आदर का उत्तम उदा . हैं, मोहन राकेश का नाटक 'आषाढ का एक दिन ' इस नाटक का नायक कालिदास नायिका मल्लिका से प्रेम करता है। दोनों एक दूसरे को जी- जान से चाहते हैं । दोनो प्रेमी और प्रेमिका के इस रिश्तें से मल्लिका की माँ अंबिका निराश है। मल्लिका अपनी माँ को समझा ते हुए कहती है- ''मैने भावना में एक भावना का वरण किया है। मेरे लिए यह संबंध सब संबंधों से बड़ा है। मैं वास्तव में अपनी भावना से प्रेम करती हूँ जो पवित्र है , कोमल है, अनश्वर हैं।''[16]
इस प्रकार प्रेम में एक - दूसरे की भावनाओं को समझना उसका सम्मान करना, महत्त्वपुर्ण होता है।

प्रेम में द्वैत को स्थान नहीं -

प्रेम अद्वैत की स्थिति महत्त्वपु र्ण होती है। इस में अद्वैत को कोई स्थान नहीं होता। सच्चे प्रेमियों में अद्वैत की स्थिति बनी रहती है। प्रेमीजन एक-दूसरे के प्रति समर्पित रहते हैं । इसलिए वे एक-दूसरे में समा जाते है। एक का सुख- दुख दूसरे का सुख-दुख बन जाता है। उनकी करनी और कथनी में अद्वैत की भावना दिखाई पड़ती है। जिस प्रकार हल्दी और चुना अपना रंग त्यागकर लाल रंग में बदलकर एक हो जाते है। उसी प्रकार प्रेमी और प्रेमिका अपना अस्तित्व त्यागकर अद्वैत हो जाते है। इस संदर्भ में कबीर कहते हैं-

''लाली मेरे लाल की जित देखूँ तित लाल
लाली देखन मैं चली, मैं भी हो गई लाल।''[17]

प्रेम और अंधत्व की स्थिति-

प्रेम में अंधत्व की स्थिति होती है। यह बात सौ फिसदी सही है। जब मनुष्य जिस किसी से प्रेम करता है तब उसे प्रेम के सिवा कुछ भी दिखाई नहीं देता। वह जाँत- पाँत धर्म सब कुछ भूल जाता है। वह अपनी प्रेमिका को गुण- दोष सहीत स्वीकार कर लेता है। वह किसी से भी ड़रता नहीं है। दुनियाँ की बड़ी से बड़ी ताकद से वह मुकाबला करता है। अपने प्रेम के खातीर वह अपनी जान तक कुर्बान कर देता है। प्रेम के कारण उसे कुछ भी दिखाई नहीं देता। जायसी 'पद्मावत' में इस अंधत्व के बारे में लिखते हैं-

''तीन लोक चौदह खँड़ सबै परै मोहि सूझि
प्रेम छाँड़ि नहीं लीन किछु जौ देखे मन बूझि।''[18]

प्रेम में प्रतिदान की कामना नहीं-

प्रेम में समर्पण और विश्वास की भावना होती है , प्रतिदान की नहीं। इसमें लेन- देन की भावना नहीं होती। प्रेम ने कभी लेना नहीं सीखा। उसने सीखा है सिर्फ देना। प्रेमी की चाहत पर वह मर- मिटता है। मृत्यु में भी अपने जीवन की सफलता पाता है। जहाँ पर प्रेम में लेन- देन की भावना होती है वहाँ पर असफल हो जाता है। इसलिए लो ग कहते है प्रेम में व्यावहारिकता को कोइ स्थान नहीं होता। प्रेम निस्वार्थ और निर्व्याज होता है। बिना व्यवहार के किया गया प्रेम ही सर्वोत्कृष्ठ प्रेम है। इस प्रकार सच्चा प्रेम कभी प्रतिदान की कामना नहीं करता।

प्रेम एक दुसाध्य रस्ता-

प्रेम का रास्ता मु श्किलों से भरा हुआ होता है। उसका रास्ता कठिन और काँटों से भरा हुआ है। इस कठिन और काँटों भरी राह पर चलना काफी मुश्किल है। इस राह पर चलने वाले प्रेमी जनों की सहनशीलता का अंत देखा जाता है। अर्थात सहनशीलता के बिगर इस राह को हम पार नहीं कर सकते। प्रेम एक कठिन मार्ग है। इस जहरीले मार्ग पर चलकर जिसने जहर को हजम किया वहीं अपने प्रेम में विजय पा सकता है। प्रेम की राह दिखती उतनी आसान नहीं होती। इसमें अनेक समस्याओं से मुकाबला करना पड़ता है। जयशंकर प्रसाद ने प्रेमपार्थक को कितनी मुश्किल राहों से गुजरना पड़ता है इस का चित्रण किया है। वे कहते हैं-

'' प्रेम पथिक की राह अनोखी
भूल-भूल कर चलना है।
घनि छाँह है जो ऊपर
तो नीचे काँटे बिछे हैं।''[19]

अत: प्रेम का मार्ग इतना आसान नहीं जिसे हर कोई पा सके। स्पष्ट है कि प्रेम एक दुसाध्य रस्ता है।

प्रेम अमृत भी और जहर भी-

यह सौ प्रतिशत सही है कि प्रेम अमृत भी है और जहर भी है। प्रेम जिसके जीवन में अमृत बन गया उसने स्वर्ग का सुख इसी जनम में पा लिया। वह दुनियाभर में अमर हो जाता है। उसका जीवन सार्थक हो जाता है। लेकिन यही प्रेम यदि किसी के जीवन में जहर बन जाता है तो उसका जीना हराम हो जाता है। वह पुरी तरह परास्त और नष्ट हो जाता है । उसका प्रेम असफल हो जाने के कारण उसका जीना दुभर हो जाता है। अर्थात प्रेम के

टूटने से उसका जीवन जहर के समान बन जाता है। यह प्रेम किसी को जीवनदान भी दे सकता है और ले भी सकता है। मनुष्य के जीवन को यह प्रकाशमान भी करसकता है और अंधेरामय भी कर सकता है। यह मनुष्य को तार भी सकता है और मार भी सकता है। लाखों सालों से गुजरते हुई आनेवाली मनुष्य लीला इसका उत्तम सबुत है। अत : स्पष्ट है कि प्रेम अमृत भी है और जहर भी।

उपसंहार -

प्रेम भावना स्वरूप और सिद्धांत इस अध्याय के अध्ययन और विवेचन के पश्चात जो निष्कर्ष मिले हैं वे इस प्रकार हैं- प्रेम प्रकृति ने दिया हुआ मानव को सर्वोच्य वरदान है। विश्व का हर सजीव प्राणी प्रेम के बिना जीवन संचालन में असमर्थ है। प्रेम शब्द की व्युत्पत्ति अनेक वि दवानों ने अपने-अपने ढंग से की है लेकिन बारिकी से देखने के पश्चात यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रेम शब्द का अर्थ है जो हमे प्रीति , तृप्ति, प्रसन्न करना या आनंद देना। प्रेम की परिभाषा अनेक अनेक विद्वानों ने अपने-अपने ग्रंथों में दी है। इन परिभाषाओं का अध्ययन विवेचन के उपरांत हम कह सकते है कि प्रेम की कोई भी परिभाषा परिपूर्ण नहीं है। प्रेम अनादि- अनंत होने के कारण वह परिभाषा की सीमा में नहीं बाधा जा सकता। फिर भी प्रयास करने पर हम कुछ हदतक उसके करीब पहूँच सकते हैं । अत : प्रेम प्राकृतिक भावना है। वह मनुष्य के मन में ज न्मत: छिपी रहती है और समय-समय पर अलग अलग रूपों में प्रकट होती रहती है। प्रेम के स्वरूपगत अध्ययन विवेचन के पश्चात निश्चित रूप से हम कह सकते हैं- कि प्रेम का स्वरूप निश्चित बहुत ही विस्तृत एवं व्यापक है। उसका स्वरूप निश्चित करना काफी मुश्किल है। वह गूँगे के गूढ के समान अनिर्वचनीय है। हम उसका अनुभव कर सकते है मगर कह नहीं सकते। प्रेम के सिद्धांत इस प्रकार है- प्रेम में त्याग की भावना , समर्पण एवं बलिदान की भावना , विश्वास भावना, दूसरों की भावना का आदर , द्वैत को स्थान नहीं अर्थात एकरूपता, अंधत्व की स्थिति, प्रतिदान की कामना नहीं, कठिन मार्ग, प्रेम अमृत और जहर, एक निष्ठता और अंत में प्रेम जितना मजबूत उतनाही नाजुक भी है। प्रेम में संघर्ष करना पड़ता है। इस प्रकार उपर्युक्त प्रेम सिद्धांत प्रेम में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं । इसी से मनुष्य जनमता है , खेलता है, सुख-दु:खात्मक परिस्थिति से संघर्ष करता हुआ मृत्यु को प्राप्त करता है और मरने के बाद अमर हो जाता है। स्पष्ट है कि प्रेम का मनुष्य जीवन में अनन्याधारण महत्त्व है।

संदर्भसूची -

1. डॉ. सुनितादेवी, मीराबाईकेकाव्यमेंप्रेमनिरुपण, शोधदिशाअंक 22 पृ.सं. 268
2. रामकुमारखंड़ेलवाल, हिंदीकाव्यमेंप्रेमभावनापृ.सं. 28
3. प्रोफेसर देशराज भाटीसिंह रसग्रंथावली पृ.संख्या 64
4. रसखान प्रेम वाटिका पृ.संख्या 74
5. स्वामी अखड़नंद नारद भक्तिदर्शन पृ.संख्या 206
6. वहीं पृ.संख्या 206
7. वहीं पृ.संख्या 206
8. प्रसाद जयशंकर कामायनी पृ.संख्या 88
9. श्रीमती शारदा जौड़ नाई कविता में प्रेम चित्रण पृ.संख्या 25
10. वहीं पृ.संख्या 25
11. संपादक श्यामसुंदरदास- कबीर ग्रंथावली पृ.संख्या 30
12. संपादक शुक्ल आ. रा. भ्रमरगीतसार पृ.संख्या 90
13. मैथिली शरण गुप्ता साकेत दोनों ओर से प्रेम पलता हैं पृ.संख्या 17
14. आ.परशुराम चतुर्वेदी मीरा की पदावली पृ.संख्या 103
15. सुभद्राकुमारी चौहान ठुकरा दो या प्यार कारों , पृ.संख्या 27
16. मो.राकेश आषाढ का एक दिन पृ. संख्या 13
17. पुष्पपाल सिंह कबीर ग्रंथावली सहीक पृ. संख्या 285
18. जायसी पद्मावत पृ. संख्या 40
19. जयशंकर प्रसाद प्रेमिपथिक पृ. संख्या 36